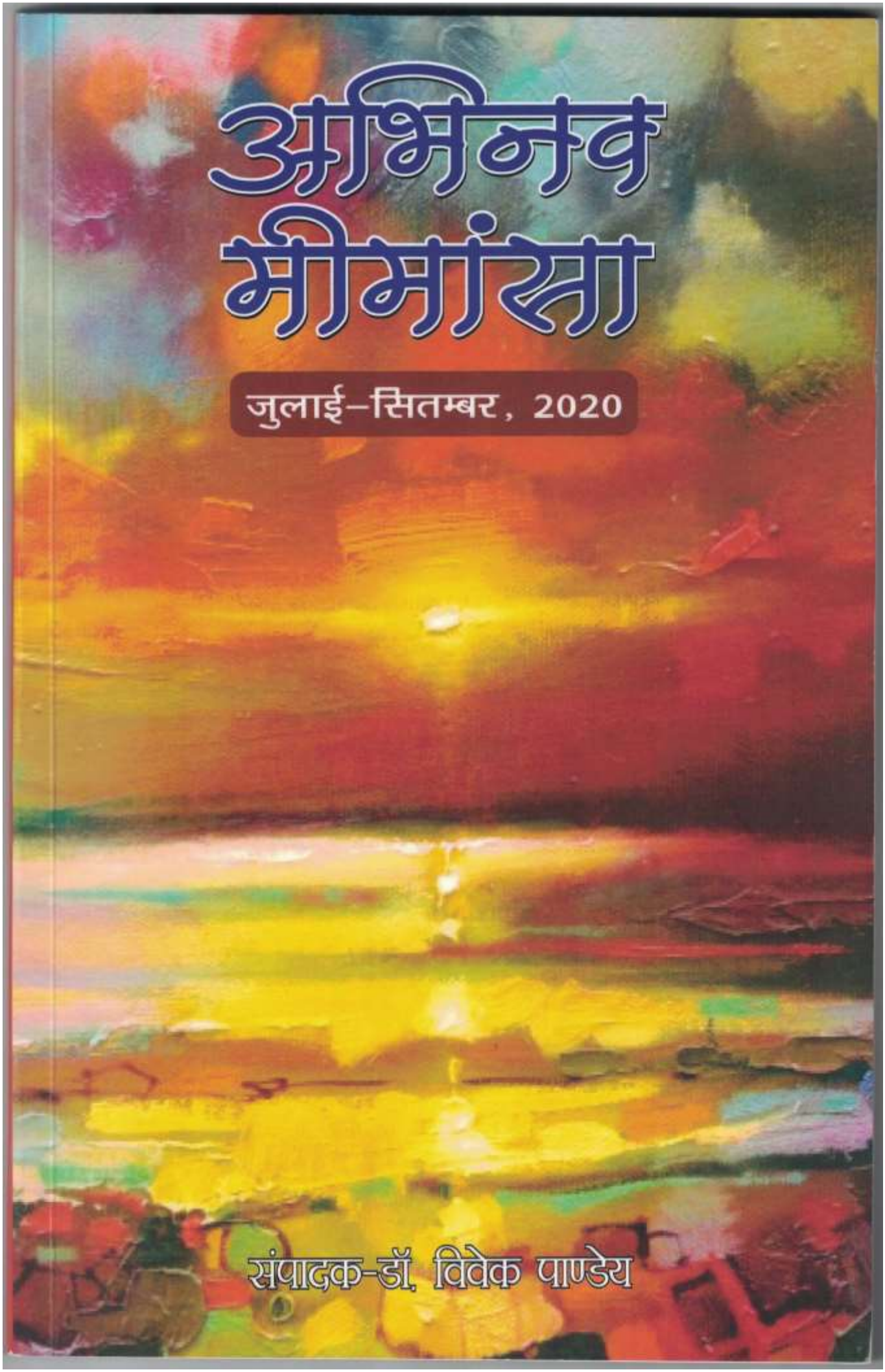
अभिनव मीमांसा
जुलाई–सितम्बर, 2020
संपादक-डॉ. विवेक पाण्डेय

अनुक्रम

सम्पादकीय	डॉ. विवेक पाण्डेय	5
विशिष्ट सम्पादकीय	ओम प्रकाश पारीक	7

साहित्य खण्ड

विशेष प्रस्तुति-

1- स्वप्निल श्रीवास्तव की कविता		9
2- एकान्त श्रीवास्तव की कविताएं		11

आलोचना

1	साहित्य, स्वाधीनता और गांधी	प्रो. शिव प्रसाद शुक्ल	21
2	रामराज्य : रामायण को नये अंदाज में प्रस्तुत करते आशुतोष राणा	पवन कुमार	26
3	भूमण्डलीकरण के दौर में मंगलेश डबराल की कविताएं	सुरेन्द्र कुमार मिश्र	34

व्यंग्य

1-	हाय मिलावट, वाय मिलावट	गिरीश पंकज	38
2-	पर्यावरण के देवता	मीना अरोड़ा	43

कहानी

1-	खंडित हुई परंपरा	डॉ. करुणा पाण्डे	46

गीत

1- रतन कुमार श्रीवास्तव 'रतन' के गीत		50

कविताएं

1- स्वाति जैन की कविताएं		56
2- अशोक सिंह की कविताएं		60
3- रेनू शब्दमुखर की कविताएं		64
4- केशव शरण की कविताएं		67

'रामराज्य' : रामायण को नए अंदाज़ में प्रस्तुत करते आशुतोष राणा।

पवन कुमार

आशुतोष राणा टेलीविजन, फिल्म और रंगमंच की दुनिया में श्रेष्ठ अभिनेता के रूप में अपनी मुकम्मल पहचान बना चुके हैं। इस कलाकार के व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण आयाम है उनका लेखक, साधक और विचारक होना। हाल ही में कौटिल्य बुक्स से प्रकाशित उपन्यास, 'रामराज्य' उनकी लेखकीय क्षमता का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस उपन्यास के माध्यम से आशुतोष राणा का साधक और विचारक व्यक्तित्व भी प्रकट होता है। हालांकि वे पूर्व में भी उनका एक व्यंग्य संग्रह 'मौन मुस्कान की मार' प्रकाशित हुआ था जिसकी उसकी चर्चा विभिन्न साहित्यिक मंचों पर हुई थी।

बहरहाल हम आते हैं 'रामराज्य' पर। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, इस उपन्यास की कथा रामायण की कतिपय घटनाओं के इर्द गिर्द घूमती है। इस उपन्यास में लेखक आशुतोष राणा ने कुछ पात्रों के माध्यम से रामायण की कथा को अनूठे तरीके से प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में उन्होंने भारतीय जनमानस में युगों-युगों से व्याप्त रामायण के विभिन्न पात्रों की स्थापित छवियों के साथ अभिनव प्रयोग किये हैं। राणा ने अपने इस उपन्यास में इस महाकाव्य के नायक राम पर तो प्रभावी रूप से लिखा ही है, साथ ही साथ अन्य चरित्रों के विषय में भी नवीनतम सोच के साथ धारणाएं स्थापित करने का प्रयास किया है। उन्होंने मननायक-जननायक श्री राम के विषय में गहरे से पड़ताल की है। उन्होंने श्री राम और उनके जीवन से जुड़े हुए विभिन्न व्यक्तित्वों और प्रसंगों के विषय में पूर्व से स्थापित कई धारणाओं, मिथकों, आग्रहों, दुराग्रहों को पीछे धकेलते हुए एक परिष्कृत और बिल्कुल मौलिक सोच के साथ राम के जीवन को प्रस्तुत किया है। कतिपय खलचरित्रों के बारे में नयी सोच के साथ प्रस्तुति इस उपन्यास को और भी महत्वपूर्ण बनाती है।

आशुतोष राणा मूलतः रंगकर्मी हैं, वे जानते हैं कि खलनायक ही नायक होने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। सम्भवतः इसीलिए उन्होंने इस उपन्यास में कई खलचरित्रों की नकारात्मकता को भी सकारात्मकता के साथ चरित्र विस्तार देकर अपने उपन्यास में 'राम, 'रामत्व, 'रामराज्य' की आवश्यकता को प्रकट किया है। लेखक 'रामराज' की जगह 'रामराज्य' की स्थापना पर अधिक बल देता है। उपन्यास संवादात्मक शैली में लिखा गया है। उपन्यास की भाषा और प्रस्तुति इतनी प्रभावी हैं, कि कई स्थानों पर लेखक अपनी प्रतिभा से अपने पाठकों को चौंकाता है। कहना न होगा कि यह कृति आशुतोष राणा को एक श्रेष्ठ लेखक के रूप में स्थापित करने के लिए पर्याप्त है। स्वयं आशुतोष के शब्दों में 'श्रीराम का चरित्र और उनकी

कथा, हृदय को आनंद देने के साथ-साथ कई प्रश्नों को भी खड़ा करती थी। ये सभी प्रश्न ऐसे थे जिनसे मेरे हृदय और बुद्धि में निरंतर घर्षण होता रहता था। इसी घर्षण का प्रतिफल है, उपन्यास 'रामराज्य'।'

यह उपन्यास ग्यारह शीर्षकों के अन्तर्गत बंटा हुआ है। कैकेयी, सुपर्णा-शूपर्णखा, हनुमान, विजय पर्व, पंचवटी, लंका जैसे शीर्षकों के अंतर्गत उपन्यास का ताना बाना बुना गया है। 'कैकेयी' इस उपन्यास का प्रथम खंड है। इस खंड में आशुतोष राणा ने कैकेयी के चरित्र को पर्याप्त ग्लोरीफाई किया है। कैकेयी के व्यक्तिगत सौंदर्य व गुणों का बखान करने में आशुतोष राणा ने कोई कमीं नहीं छोड़ी है। आशुतोष के शब्दों में, कैकेयी का कद सामान्य महिलाओं के कद की अपेक्षा लंबा है। गुलाबी वर्ण है। कैकेयी कर्म की शक्ति में विश्वास रखती है। आशुतोष के ही शब्दों में राजा दशरथ के चारों पुत्र अपनी माँ की कोख से भी अधिक मान महारानी कैकेयी की गोद को देते हैं। अन्य माँए तो बच्चों के जन्म का आधार हैं किन्तु कैकेयी उनके जीवन की निर्माता है। कैकेयी के होते हुए किसी भी अनिष्ट की आशंका व्यर्थ है। कैकेयी उन बच्चों की मात्र माता ही नहीं, उनकी गुरू भी है। वह उन चारों बच्चों की वृत्ति, प्रवृत्ति, भाव और स्वभाव को भलीभाँति जानती है।

कैकेयी का प्रभाव अपने पुत्रों पर इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि जब वे राम और भरत को बाण संधान की प्रारंभिक शिक्षा दे रही थीं तो उन्होंने भरत से एक कपोत पर लक्ष्य साधने के लिए कहा, तो भरत ने भावुक होकर यह कहते हुए अपना धनुष नीचे रख दिया कि निर्दोष पक्षी को लक्षित करके मुझे इस विद्या में दक्ष नहीं होना है। इसके विपरीत कैकेयी जब राम से कपोत को लक्षित करने के लिए कहती हैं तो राम उचित-अनुचित का विचार किए बिना उस कपोत पर निशाना साधते हैं। राम के सधे हुए निशाने से प्रसन्न होकर कैकेयी ने राम से पूछा, 'पुत्र, तुमने उचित-अनुचित का विचार नहीं किया? तुम्हें उस पक्षी पर तनिक भी दया नहीं आयी?' राम ने भोलेपन से कहा, 'माँ मेरे लिए किसी के जीवन से अधिक महत्वपूर्ण मेरी माता की आज्ञा है। उचित-अनुचित का विचार करना, यह माँ का काम है। माँ का संकल्प, उसकी इच्छा, उसके आदेश को पूरा करना ही मेरा लक्ष्य है। तुम मुझे सिखा भी रही हो और दिखा भी रही हो। तुम हमारी माँ ही नहीं, हमारी गुरू भी हो।' यह किसी भी पुत्र का, शिष्य का कर्तव्य होता है कि वह अपने गुरू, अपनी माँ के दिखाए और सिखाए गये मार्ग पर निर्विकार, निर्भीकता के साथ बढ़े, अन्यथा गुरू का सिखाना और दिखाना सब व्यर्थ हो जाएगा।' कैकेयी ने आह्लादित होते हुए राम को अपने अंक में भर लिया और दोनों बच्चों को लेकर राम द्वारा गिराए गये कपोत के पास पहुँची। भरत आश्चर्य से उस पक्षी को देख रहे थे, जिसे राम ने अपने पहले ही प्रयास में मार गिराया था। पक्षी के वक्ष में बाण घुसा होने के बाद भी उन्हें रक्त की एक बूँद दिखाई नहीं दे रही थी। भरत ने उस पक्षी को हाथ में लेते हुए कहा, 'माँ यह क्या? यह तो खिलौना है? तुमने कितना सुंदर प्रतिरूप बनाया इस पक्षी का। मुझे ये जीवित पक्षी प्रतीत हुआ था, तभी मैं इसके प्रति दया के भाव से भर गया था। माया

के वशीभूत होकर मैंने आपकी आज्ञा का उल्लंघन किया, इसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ।' तब कैकेयी ने बहुत ममता से कहा था, 'पुत्रों, मैं तुम्हारी माँ हूँ....मैं तुम्हें बाण का संधान सिखाना चाहती हूँ, वध का विधान नहीं, क्योंकि लक्ष्य भेद में प्रवीण होते ही व्यक्ति स्वंय जान जाता है कि किसका वध करना आवश्यक है और कौन अवध्य है। किन्तु स्मरण रखो, जो दिखाई देता है आवश्यक नहीं कि वह वास्तविकता हो और यह भी आवश्यक नहीं कि जो वास्तविकता हो, वह तुम्हें दिखाई दे। कुछ जीवन, संसार की मृत्यु के कारण होते हैं, तो कुछ मृत्यु, संसार के लिए जीवनदायी होती है।'

इस प्रकार के और भी कई प्रसंगों के माध्यम से लेखक ने कैकेयी के चरित्र को अत्यन्त आकर्षक बनाने का प्रयास किया है। लेखक यह भी दिखाता है कि कैकेयी की दासी मंथरा जब उसे दिग्भ्रमित करने का प्रयास करती है तो कैकेयी उससे विचलित नहीं होती। वह तो राम स्वयं ही जब कैकेयी से अनुरोध करते हैं कि उन्हें सिंहासन की अपेक्षा कुश-आसन से अधिक मोह है, क्योंकि जो कार्य कुश-आसन पर बैठकर सम्पन्न किये जा सकते हैं वे सिंहासन पर बैठकर सम्पन्न नहीं किये जा सकते। राम के इस अनुरोध को कैकेयी ठुकराते हुए कहती है कि, 'युवावस्था में इस प्रकार सन्यास की बातें करना कही दायित्वों से पलयान अथवा सन्यास तो नहीं है राम?' राम इसका उत्तर देते हैं, 'संन्यास संसार के प्रति पराजय से उत्पन्न भाव नहीं हैं, अपितु यह उन्हीं व्यक्तियों के हृदय में जन्म लेता है, जो संसार को जय करने की प्रेरणा से भरे होते हैं। संन्यास का अर्थ जीवन से पलायन नहीं अपितु अत्यंत सजगता के साथ जीवन का पालन करना होता है।' यह कहते हुए राम, कैकेयी से आग्रह करते हैं कि 'मैं चाहता हूँ कि आप पूज्य पिताजी से बात करें कि वे राम को अपने मन के मार्ग पर नहीं अपितु वन के मार्ग पर चलने दें।' कैकेयी ने बहुत गम्भीरता से राम के नेत्रों में झाँकते हुए कहा, 'पुत्र, तुम वनगमन को लेकर इतने आग्रही क्यों हो?' राम के स्वर में करूणा थी। वे शून्य में देखते हुए बोलने लगे, 'जब मैं गुरू विश्वामित्र के साथ सिद्धाश्रम गया था, तब ताड़का को देखकर मुझे लगा कि राम को अयोध्या की अपेक्षा अरण्य में रहना चाहिए। स्त्री तो संतति और संस्कृति की तारक और उद्धारक होती है, किन्तु वही स्त्री यदि तारक से ताड़का बन जाये तब वह रक्षक को राक्षसी चेतना में रूपांतरित कर देती है। पुरूष का स्खलन किसी साम्राज्य के अस्त होने का कारण हो सकता है, किन्तु स्त्री का पतन संस्कृति और संतति को ध्वस्त कर देता है।' राम और कैकेयी के मध्य इस प्रकार के कई वैचारिक विन्दुओं पर वार्तालाप होती है। इन वार्तालापों से पाठकों के मन में राम और कैकेयी के बीच अनूठा सम्बन्ध देखने को मिलता है। इन दोनों के बीच होने वाले संवादों में कितने ही विषयों को स्पर्श किया गया हैं, वह इस खंड की उपलब्धि है।

इसी वार्तालाप के दौरान राम के माध्यम से लेखक कहता है कि, संसार में मूलरूप से दो विचारधाराएं होती हैं। एक सम्पत्ति को ही संस्कृति मानने वाले होते हैं और दूसरे वे, जिनके लिए संस्कृति ही सम्पत्ति होती है। एक उपभोक्तावादी वर्ग होता है और दूसरा उपयोगिता के

सिद्धांत में विश्वास रखने वाला समुदाय। उपभोक्ता संस्कृति को मानने वाला वर्ग, सम्पत्ति को ही संस्कृति मानकर उसका रक्षण और वर्धन करता है। सम्पत्ति को ही संस्कृति मानने वाले मनुष्य ही असुर कहलाते है। असुर अतिक्रमण में विश्वास करते हैं। वे सब कुछ लूट लेने के भाव से भरे होते हैं। ये संसार के समस्त वैभव को, सम्पत्ति को और संसाधनों को अपनी शक्ति के दम पर अपने अधीन कर उस पर आधिपत्य स्थापित करना चाहते हैं।

इन दोनों पात्रों के मध्य उपयोगिता के सिद्धान्त, नगरों का विकास, नागरिकों का विकास, आत्मनिर्भरता आदि विविध विषयों पर चर्चा होती है। आशुतोष इस नये मिथक को अत्यन्त खूबसूरती के साथ गढ़ने का प्रयास करते हैं कि राम का वनागमन कैकेयी की महत्वाकांक्षा के कारण न होकर वस्तुतः स्वयं राम की इच्छा पर ही हुआ था। मनवासी राम को वनवासी राम बनाने में कैकेयी की कोई भूमिका नहीं थी। लेखक आशुतोष कैकेयी को इन अर्थों में भी महान बताते हैं कि यश-अपयश में भी जो स्थिर रहे, परिस्थितियों की विषमता में भी जिसका धैर्य न चुके, किसी के प्रण की पूर्ति के लिए जो अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दे, जो शस्त्र और शास्त्र में समान रूप से दक्ष हो, जो ममता के स्थान पर मातृत्व को महत्व दे, जो स्त्री बच्चों की इच्छा नहीं अपितु उनमें व्याप्त गुणों का परिष्कार करे, जो अपनी संतान को स्वयं के स्वप्नों की पूर्ति का साधन न माने अपितु संतानों को स्वंय के स्वप्न देखने के लिए प्रेरित करे, उन्हें पूरा करने का साहस दे, जो बच्चे के चित्त, चरित्र, चिंतन की अभियंता हो, ऐसी स्त्री असाधारण ही होती है। और ये सभी गुण कैकेयी में हैं, इसलिए कैकेयी असाधारण हैं।

राम और कैकेयी के भावपूर्ण संवादों से भरा यह खंड राम के वनवास के साथ ही समाप्त हो जाता है। पूरे खंड को पढ़ने के पश्चात पाठक कैकेयी पर पुनः विचार करने पर विवश होता है। कैकेयी के विषय में एक नयी धारणा और नया मिथक पाठकों के मनो-मस्तिष्क में स्थापित करने का यह प्रयास अपनी नवीनता के दृष्टिगत आकर्षित करता है।

उपन्यास की कहानी आगे बढ़ती है। राम और कैकेयी के वार्तालाप के उपरान्त लेखक अपने पाठकों को सीधे दंडकारण्य से जोड़ता है। यहाँ की अधिष्ठात्री सुपर्णा है, जिसे शूपर्णखा के नाम से जाना जाता है। लेखक बताता है कि शूपर्णखा को उसके भाई रावण ने इस क्षेत्र की अधिष्ठात्री के रूप में नियुक्त किया है। प्रसंगवश यह बताना आवश्यक है कि शूपर्णखा के पति विद्युतजिह्व की हत्या के उपरान्त ही रावण द्वारा उसे इस क्षेत्र की अधिष्ठात्री के रूप में नियुक्त किया गया है। श्रीराम अपने वनवास के अन्तर्गत एक कालखंड यहीं इसी क्षेत्र में व्यतीत करते है। इस काल खंड में वे दंडकारण्य के स्थानीय वनवासी नागरिकों के आचार व्यवहार में व्यापक परिवर्तन लाते हैं। वे स्थानीय वनवासियों को मानव होने का बोध कराते हैं, और उनमें आक्रान्ताओं से लड़ने का साहस उत्पन्न करते हैं। यह 'रामराज्य' का अत्यन्त सुन्दर पक्ष है। शूपर्णखा इसी दंडकारण्य में राम को देखती है। शूपर्णखा का मन राम के प्रति अनुराग से भर जाता है। वह राम से मिलने पंचवटी पहुँचती है, जहाँ राम और उसके बीच सारगर्भित

संवाद होता है। इस सवांद में लेखक राम के माध्यम से यह विचार प्रकट करता है कि 'राजा का कल्याण राज्य का कल्याण नहीं होता। अपितु राज्य के कल्याण में ही राजा का कल्याण छिपा होता है। किसी भी राज्य के वैभव का आँकलन उसकी धन शक्ति से नहीं, उसकी जनशक्ति और नागरिकों की संकल्प शक्ति से किया जाता है।' इस प्रकार के उद्‌गार अपने पात्रों से व्यक्त करवाना लेखक की भाषायी पकड़ को तो प्रदर्शित करता ही है साथ ही लेखक का चिन्तक होना भी सिद्ध करता है। इसी संवाद में कहीं यह भी उल्लेख आता है कि, 'किसी का शस्त्रसम्पन्न होना उसके शस्त्र-निपुण होने का प्रमाण नहीं होता। आम नागरिकों का शस्त्रधारी होना उनके बलशाली होने का नहीं, उनकी असुरक्षित मानसिकता का प्रमाण होता है। इससे यह पता चलता है कि नागरिकों को अपने राजा की शासन व्यवस्था पर विश्वास नहीं है। वे स्वयं की सुरक्षा को लेकर आशंकित है, परिणामस्वरूप वे स्वंय ही स्वंय की रक्षा को लेकर सतर्क है। तब प्रश्न यह खड़ा होता है कि उन्हें किससे खतरा है-सह नागरिकों से या शासन द्वारा नियुक्त व्यवस्था कर्मियों से, जो राजा के प्रतिनिधि हैं? कोई भी समाज जब शास्त्र को छोड़कर शस्त्र का आश्रय लेता है, तब यह उसकी अराजक मानसिकता का संकेत होता है।'

उपन्यास के इस खंड में शूपर्णखा को एक अलग ही दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। आशुतोष की शूपर्णखा में बुद्धिमता है, साहस है और वह अपने भाई रावण के सर्वनाश के लिए प्रतिबद्ध है, क्योंकि रावण ने उसके पति की हत्या की थी। वह प्रतिशोध की ज्वाला में जल रही है, वह अवसर की तलाश में है और यह अवसर उसे लक्ष्मण द्वारा अंग-भंग किये जाने के उपरान्त प्राप्त होता है। अत्यन्त योजना पूर्ण तरीके से शूपर्णखा लंका की राजसभा के द्वार पर विलाप करती है और लंकेश से अपने लिए न्याय की गुहार करती है। रावण से कहती है कि जिन दो भाइयों ने उसका यह हाल किया है उससे बदला लेना ही होगा। शूपर्णखा यह जानती है, कि उसने रावण को अशांत और अस्थिर कर दिया है। वह जानती है कि रावण जैसे व्यक्तियों को उत्साहित करके नहीं, उद्वेलित करके ही अपना कार्य सिद्ध किया जा सकता है। शूपर्णखा यह जानती है, कि शक्तिशाली व्यक्ति की हत्या कर पाना अत्यन्त दुष्कर होता है किन्तु अंहकारी, शक्तिशाली व्यक्ति को आत्महत्या के लिए सरलता से प्रेरित किया जा सकता है। शूपर्णखा की बात सुनकर रावण युद्ध के लिए लालायित हो उठता है। इस पूरे प्रसंग में लेखक आशुतोष राणा ने अपनी कल्पनाशीलता का अदभुत परिचय दिया है। इस खंड में उन्होंने शूपर्णखा को विदुषी, चिन्तनशील, आकर्षक स्त्री बताते हुए योजनाबद्ध तरीके से लंकेश को समाप्त करने के लिए जिम्मेदार बताया है। इस खंड में शूपर्णखा और राम के बीच संवाद अत्यन्त प्रभावी हैं। इसके अतिरिक्त इस खंड में ही शूपर्णखा का स्वयं से साक्षात्कार तथा ऋषि विश्रवा के साथ वार्तालाप भी पाठकों को आनन्दित करते हैं।

'पंचवटी' खण्ड में राम द्वारा वनवासियों की सहायता से खर, दूषण, त्रिशरा सहित सहस्त्रों सैनिकों को पराजित किये जाने का वर्णन किया है। यह खंड अन्य खंडों की अपेक्षा

अति संक्षिप्त है किन्तु इसमें राम और सीता के आपसी सम्बन्धों और उनके बीच होने वाले बौद्धिक, किन्तु स्नेहिल वार्तालाप को प्रभावी ढंग से व्यक्त किया गया है। एक पति और पत्नी के मध्य हुए संवाद कितने सारगर्भित और वैचारिक हो सकते हैं, यह राम और सीता के वार्तालाप से समझा जा सकता है। इस खण्ड में एक स्थान पर राम सीता से कहते हैं कि, 'किसी स्त्री का आहत अहम शक्तिशाली पुरूष के सामर्थ्य से भी अधिक घातक होता है सीता, स्त्री की क्षमता अपार होती है, वह शून्य में भी सृजन कर सकती है और सृजन को भी शून्य बना सकती है।' इसी प्रकार का एक और उदाहरण द्रष्टव्य है, जिसमें राम अपनी पत्नी सीता को समझाते हुए कहते हैं, 'अधिकांश स्त्री-पुरूष एक दूसरे के प्रति कामासक्त होते हैं, किन्तु मात्र काम लिप्सा की पूर्ति का उद्यम पशुवत व्यवहार के अन्तर्गत आता है। कोई भी मनुष्य, पशुवत प्रवृत्ति से प्रेरित होने का बाद भी, पशुवत आचरण करते हुए भी सभ्य, सुसंस्कृत समाज में पशु की ख्याति से लब्ध होना नहीं चाहता। इसलिए वह अपने काम भाव को प्रेम के रूप में प्रस्तुत करने के बाद भी अधिकांश युगलों का जीवन, आनंद से नहीं अवसाद से भरा हुआ होता है। कामवासना की पूर्ति के लिए किये जाने वाले प्रेम में मिलने वाली सफलता जहाँ उसके जीवन में अवसाद को जन्म देती है, तो वहीं इस प्रकार के प्रेम में मिलने वाली असफलता व्यक्ति में कुंठा के भाव से भर जाता है। ऐसा विषादग्रस्त व्यक्ति स्वयं के साथ-साथ संसार को भी समाप्त कर देना चाहता है। इस प्रकार के संवाद यद्यपि प्रथम दृष्टतया मंचीय प्रतीत होते हैं, किन्तु ये संवाद ही उपन्यास की रोचकता को बढ़ाते हैं। ये संवाद लेखक के वैचारिक परिश्रम को अत्यन्त प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

उपन्यास के 'हनुमान' खंड में आशुतोष राणा ने पुनः अपनी कल्पनाशीलता का भरपूर उपयोग किया है। इस खंड में लेखक ने यह कल्पना की है कि जब श्री राम अपनी पूरी सेना के साथ समुद्र के तट पर पहुँच गये तो दूर तक फैले हुए समुद्र को देखकर उन्हें चिन्ता व्याप्त हो गयी कि अपनी सेना के साथ इस महासागर को कैसे पार किया जाये। एक ऋषि द्वारा राम को यह सुझाव दिया जाता है, कि इस संसार में अशांत को साधने का एक मात्र सूत्र है शिव का आवाहन। ऋषि के सुझाव को मानते हुए राम द्वारा इस स्थान पर पार्थिव शिवलिग का निर्माण कराया जाता है। इस पार्थिव स्वरूप का अभिषेक कराने के लिए राम को शिव के किसी सच्चे, उपासक की आवश्यकता होती है। शिव जी के प्रति रावण से सच्चा उपासक तत्समय कोई नहीं था अतएव अभिषेक सम्पन्न कराने के लिए राम उपासक के रूप में रावण को आमंत्रित करने के लिए अपने अनुज लक्ष्मण को तदोपरान्त हनुमान को रावण के पास भेजते है। ज्ञानीनामग्रगण्यम हनुमान राम के इस कार्य को पूरा करते हैं और रावण को उपासक के रूप में बुला लाते हैं। रावण अपने हाथों से पार्थिव शिवलिंग का अभिषेक करता है, और श्रीराम को विजयी भव का आशीर्वाद देकर लंका की और प्रस्थान कर जाता है। यह कहानी पाठकों के लिए नयी कल्पना है, किन्तु आशुतोष अपने व्यक्तिगत जीवन में स्वयं ही शिवजी के बड़े भक्त हैं, अतएव यह घटना निश्चित रूप से उनके लेखक मन द्वारा गढ़ी गयी घटना प्रतीत होती है।

इस उपन्यास का आठवां खंड 'कुम्भकर्ण' है। यह खंड भी लेखक आशुतोष राणा की अद्भुत कल्पनाशीलता का द्योतक है। इस खंड में उन्होंने कुम्भकर्ण के व्यक्तित्व के कई अपरिचित पहलुओं को पाठकों के सामने लाने का प्रयास किया है। लेखक की दृष्टि में कुम्भकर्ण एक विकट योद्धा ही नहीं, एक महान वैज्ञानिक भी था। रावण के समस्त प्रयोगों, वैज्ञानिक सूत्रों, आविष्कारों को मूर्त रूप प्रदान करने का कार्य कुम्भकर्ण किया करता था। उसके द्वारा किये जा रहे भीषण वैज्ञानिक आविष्कारों को संसार से गुप्त रखने के लिए रावण ने सम्पूर्ण जगत में यह प्रचारित कर दिया था कि उसका भाई कुम्भकर्ण वर्ष में छः मास निद्रामग्न रहता है। कुम्भकर्ण की एकाग्रता, उसके अध्ययन, उसकी साधना में किसी भी प्रकार का कोई व्यवधान न उत्पन्न हो इसके लिए रावण ने एक राजाज्ञा भी पारित कर दी थी कि कुम्भकर्ण की निद्रा में व्यवधान पहुँचाने वाले व्यक्ति को मृत्युदंड दिया जायेगा, किन्तु दोनों भाईयों का एक-दूसरे के साथ सतत सम्पर्क बना रहता था। रावण इस सत्य को जानता और मानता भी था कि रावण यदि मस्तिष्क है, तो कुम्भकर्ण उसकी भुजा। कुम्भकर्ण की उपलब्धियां, उसका ज्ञान, उसका सामर्थ्य इतना विशाल था कि संसार को उसका व्यक्तित्व पर्वत जैसा विशाल दिखाई देता था, जिससे जगत में यह धारणा व्याप्त हो गयी थी कि कुम्भकर्ण की देह छः सौ बाँस लम्बी और सौ बाँस चौड़ी है। एक लाख हाथियों का बल उसकी भुजाओं में है। लेखक कुम्भकर्ण को विचारशील बताते हुए कहता है कि उसने अपने भाई रावण को समझाने का प्रयास किया कि राम के साथ हो रहा यह युद्ध हमारा अन्तिम युद्ध होगा। कुम्भकर्ण यह भी कहता है कि उसके जीवित रहते हुए स्वंय परमात्मा भी लंका या लंकाधिपति का अहित नहीं कर सकते। लेखक कुम्भकर्ण और रावण के आपसी सम्बन्धों को धर्म-अधर्म, मान-अपमान, न्याय-अन्याय से ऊपर उठकर अशर्त प्रेम पर आधारित रखता है। लेखक ने उपन्यास में रोचकता बढ़ाने के लिए युद्ध के दौरान कुम्भकर्ण मनुष्य के जैसे दिखाई देने वाले अत्याधुनिक लौह यंत्र में सवार होकर आना बताया है। यह प्रसंग आज के रोबोट युग की परिकल्पना से प्रभावित लगता है। राम द्वारा कुम्भकर्ण का वध कर दिया जाता है। कुम्भकर्ण के पश्चात रावण की सेना का नेतृत्व मेघनाद करता है, किन्तु वह भी युद्ध में मारा जाता है। अन्त में रावण युद्ध में प्रकट होता है। इस युद्ध में राम और रावण के बीच हुए संवाद अत्यन्त विचारोत्तेजक हैं। रावण और मंदोदरी के बीच हुए वार्तालाप भी इस खंड के अत्यन्त भावपूर्ण प्रसंग हैं। अन्ततः रावण का पराभव हो जाता है, और राम-रावण युद्ध समाप्त हो जाता है।

अन्तिम खंड 'सीता परित्याग' है। इस खंड में राम-सीता के अलग होने का वर्णन है। दुर्मुख द्वारा सीता पर आरोप लगाए जाने के कारण राम द्वारा अधूरे मन के साथ सीता का त्याग करते हैं। पूरे उपन्यास में राम को पहली बार अपमान की अग्नि में जलते हुए दिखाया जाता है। इस खंड में सीता-राम के वार्तालाप अद्भुत हैं।

इस उपन्यास का सर्वाधिक सशक्त पक्ष इसकी भाषा है। भाषा यद्यपि संस्कृत निष्ठ है, किन्तु इतनी प्रवाहमय है कि पाठकों को सुरूचिपूर्ण लगती है। यदि कहीं कोई क्लिष्ट या गूढ़

शब्द आता भी है, तो उसका अर्थ भी उसी पृष्ठ पर नीचे दे दिया गया है।

पूरे उपन्यास में स्थान-स्थान पर ऐसे विचारपूर्ण संवाद पढ़ने को मिलते हैं, जो जीवन के दर्शन का उद्घोष करते हैं। यह लेखक की कुशलता है कि वे इस दर्शन को अलग-अलग पात्रों के माध्यम से व्यक्त कराते हैं। कतिपय विचारों पर दृष्टि डालना रूचिकर होना, यथा- 'मेरे लिए विवाह दो शरीरों के बीच घटित होने वाला कर्मकाण्ड नहीं है। अपितु मन कर्म, वचन के स्तर पर घटने वाली एक आत्मिक क्रिया है।' (राम द्वारा शूपर्णखा को समझाते हुए कहना) इसी प्रकार एक उदाहरण और देखें जिसमें लेखक कहता है कि 'मनुष्य, मनुष्य से तो लड़ सकता है, किन्तु प्रकृति द्वारा जब उस पर प्रहार किया जाता है तब शक्तिशाली से शक्तिशाली व्यक्ति भी आक्रामक नहीं, रक्षात्मक हो जाता है। उस समय उसकी सम्पूर्ण ऊर्जा अपने प्रतिद्वंद्वी को समाप्त करने में नहीं, अपितु स्वयं को सुरक्षित करने में व्यय होती है।'

इसी प्रकार एक और प्रसंग का उल्लेख करना रूचिकर होगा, जिसमें कि रावण को समझाते हुए मारीच कहता हैं कि, 'किसी के धर्म को खंडित करके अपने धर्म की रक्षा नहीं होती। धर्म को ध्वस्त और खंडित करने के प्रयास में व्यक्ति स्वयं ही ध्वस्त और खंड-खंड हो जाता है, क्योकि धर्म पक्षपाती नहीं होता। वह सूर्य की भांति होता है, जिस प्रकार सूर्य पापी हो या पुण्यात्मा, सभी को समानता से प्रकाषित करता है, वैसे ही धर्म के लिए भी कोई अपना पराया नहीं होता। जिस प्रकार पृथ्वी पापियों और पुण्यात्माओं को समानता से साधे रखती है, उसी प्रकार धर्म भी समान रूप से सभी को आधार देता है। इसलिए किसी के धर्म पर किया गया प्रहार स्वंय की जड़ पर किये गये प्रहार के जैसा होता है।'

अंततः 'रामराज्य' जनश्रुतियों में रची-बसी और जनमानस के मनोमस्तिष्क में स्थापित रामकथा को एक नए कोण से देखने की कोशिश है। कैकेयी और शूर्पणखा जैसे खलचरित्रों की नकारात्मक छवि को बदलने के लिए जो प्रयास आशुतोष राणा ने किए हैं, क्या उससे इन खलचरित्रों की पूर्व स्थापित छवि बदलेगी, यह एक सवाल है।

'रामराज्य' निश्चित रूप चरित्रों के प्रकटीकरण और प्रस्तुतिकरण में अपने नवीन प्रयोगों के लिए महत्वपूर्ण कृति सिद्ध होगी। ऐसे पाठक जो विचारशील हैं, उन्हें यह कृति लेखक आशुतोष राणा की प्रयोगधर्मिता के कारण प्रभावित करेगी। बहरहाल एक प्रयोगधर्मी अभिनेता तथा लेखक आशुतोष राणा को उनके साहसिक व वैचारिक साहित्यिक प्रयास के लिए साधुवाद!

(लेखक भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी हैं।)

मोबाइल नं. 9412290079

पुस्तक का नाम	:	रामराज्य (उपन्यास)
लेखक	:	आशुतोष राणा
वर्ष	:	2020
प्रकाशक	:	कौटिल्य बुक्स 309, हरि सदन, 20, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 फोन : 011-47534346, 09911554346